श्रील माधवेन्द्र पुरीपाद

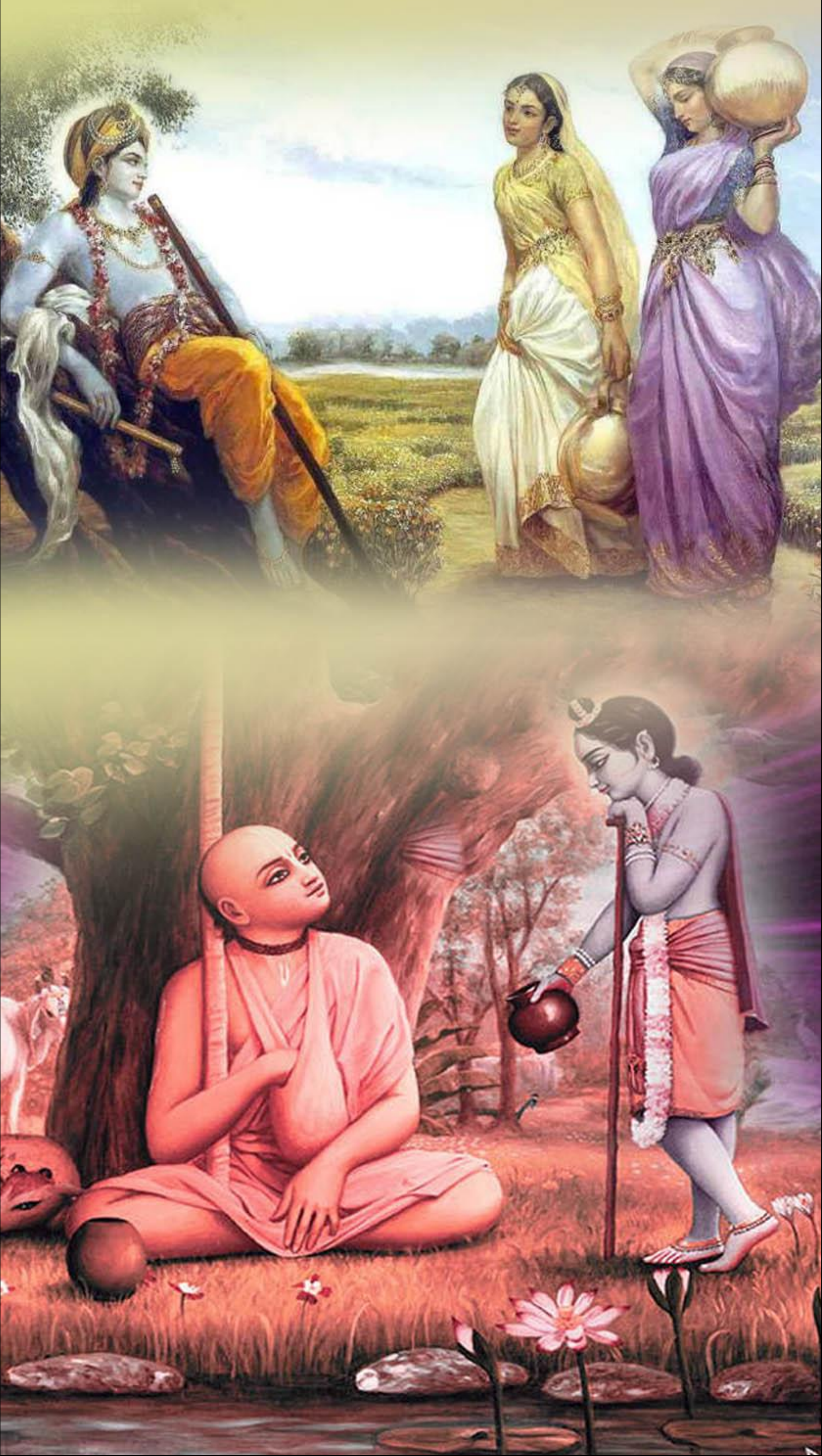

श्रीलगुरुदेव

श्रीलगुरुदेव

श्रील माधवेन्द्र पुरी पाद जी 14वीं शताब्दी में आविर्भूत हुए थे। श्रीमन्महाप्रभु जी के आविर्भाव से पहले उनकी लीला के पार्षद-गुरु-वर्ग रूपी सेवकों का आविर्भाव हुआ था।

कृष्ण यदि पृथिवीते करेन अवतार।
प्रथमे करेन गुरुवर्गेर संचार॥

पिता माता गुरु आदि यत मान्यगण।
प्रथमे करेन सबार पृथ्वीवीते जनम॥

माधव-ईश्वरपुरी, शची, जगन्नाथ।
अद्वैत आचार्य प्रकट हैला सेइ साथ॥

(चै. च. आ. 3/92-94)

अन्य-अन्य गुरु वर्गों के साथ श्रीमाधवेन्द्र पुरी, श्रीईश्वर पुरी, श्रीशची, श्रीजगन्नाथ तथा श्रीअद्वैत आचार्य जी प्रकट हुये थे। पुनः श्रीचैतन्य चरितामृत की आदि लीला के तेरहवें परिच्छेद (52–56) में इस प्रकार लिखा हुआ है—

“कोन वाञ्छा पूरण लागी
ब्रजेन्द्रकुमार।
अवतीर्ण हैते मने करिला विचार॥

आगे अवतारिला येये गुरु-परिवार।
संक्षेपे कहिये, कहा ना याय विस्तार॥

श्रीशची-जगन्नाथ, श्रीमाधवपुरी।
केशव भारती, आर श्रीईश्वरपुरी॥

अद्वैत आचार्य, आर पण्डित श्रीवास।
आचार्यरत्न, विद्यानिधि, ठाकुर हरिदास॥

श्रीहट्ट-निवासी, श्रीउपेन्द्रमिश्र नाम।
वैष्णव, पण्डित, धनी, सद्गुण-प्रधान॥”

[अर्थात् न जाने अपनी किस इच्छा को पूर्ण करने के लिए श्रीब्रजेन्द्र कुमार ने अवतार लेने के लिए मन में विचार किया और अपने आने से पहले ही जिन-जिन गुरु वर्ग का प्राकट्य कराया उनका मैं संक्षेप में वर्णन करता हूँ, क्योंकि उनका विस्तार में वर्णन नहीं किया जा सकता। यह परिवार इस प्रकार है-

श्रीशची माता, श्रीजगन्नाथ मिश्र, श्रीमाधवेन्द्र पुरी, श्रीकेशव भारती, श्रीईश्वरपुरी, श्रीअद्वैताचार्य,श्रीवास पण्डित, श्रीआचार्य रत्न, श्रीविद्यानिधि, ठाकुर हरिदास तथा हट्ट निवासी श्रीउपेन्द्र मिश्र आदि। ये सभी वैष्णव हैं, पण्डित हैं, धनी हैं तथा सभी सदगुणों से सम्पन्न हैं।]

श्रीमाधवेन्द्र पुरीपाद जी कलिकाल में श्री, ब्रह्म, रूद्र व सनक—इन चारों भुवन-पावन-वैष्णव सम्प्रदायों में से ब्रह्म-सम्प्रदाय या मध्वाचार्य सम्प्रदाय के अंतर्गत गुरु है। श्रीमध्व-परम्परा की गौड़ीय वैष्णव शाखा श्रीगौर गणोद्देश

दीपिका, प्रमेय रत्नावली व श्रीगोपाल गुरु गोस्वामी जी के ग्रन्थ में उद्धरित है। श्रीभक्ति रत्नाकर में भी इसका उल्लेख पाया जाता ह। श्रीगौर गणोद्देश दीपिका में श्रीमध्व-शाखा एक प्रकार वर्णित है—

परव्योमेश्वरस्यासीच्छिष्यो ब्रह्मा जगत् पतिः।

तस्य शिष्यो नारदोऽभूत् व्यासस्तस्याप शिष्यताम्।

शुको व्यासस्य शिष्यत्वं प्राप्तो ज्ञानावबोधनात्।

व्यासाल्लबध-कृष्णदीक्षोमध्वाचार्य महायशाः।

तस्य शिष्योऽभवत् पद्मनाभाचार्य-
महाशयः।

तस्य शिष्यो नरहरिस्तच्छिष्यो
माधवद्विजः।

अक्षोभ्यस्तस्य शिष्येऽभूत्तच्छिष्यो
जयतीर्थकः।

तस्य शिष्यो ज्ञान-सिन्धुः तस्य
शिष्यो महानिधिः।

विद्यानिधिस्तस्य शिष्यो
राजेन्द्रस्तस्य सेवकः।

जय धर्म मुनिस्तस्य शिष्यो
यद्गणमध्यतः।

श्रीमद्विष्णु पुरी यस्तु
भक्तिरत्नावलीकृतिः।

जयधर्मस्य शिष्योऽभूत्ब्रह्मण्यः
पुरुषोत्तमः।

व्यासतीर्थस्तस्य शिष्यो यश्चक्रे विष्णु
संहिताम्।

श्रीमाल्लक्ष्मीपतिस्तस्य शिष्यों
भक्तिरसाश्रय:।

तस्य शिष्यो माधवेन्द्रो यद्धर्मोऽयं
प्रवर्त्तितः।

तस्य शिष्योऽभवत् श्रीमानीश्वराख्य
पुरी यतिः।

कलयामास श्रृङ्गारं यः शृङ्गार फलात्मकः।

अद्वैतः कलयामास दास्यसख्ये फले उभे।

ईश्वराख्यपुरीं गौर उररीकृत्य गौरवे।
जगदाप्लावयामास प्राकृताप्राकृतात्मकम्॥

(गो. ग.)

श्रीलक्ष्मीपति जी के शिष्य श्रीमाधवेन्द्र पुरीपाद जी, श्रीमाधवेन्द्र पुरीपाद जी के शिष्य श्रीईश्वर पुरी पाद जी, श्रीअद्वैत आचार्य, श्रीपरमानन्द पुरी (त्रिहुत देशीय विप्र), श्रीब्रह्मानन्द पुरी, श्रीरंग पुरी,

श्रीपुण्डरीक विद्यानिधि तथा श्रीरघुपति उपाध्याय इत्यादि। (श्रीमन् नित्यानन्द प्रभु जी के गुरु श्रीमाधवेन्द्र पुरीपाद जी, मतान्तर में श्रीलक्ष्मीपति जी, प्रेमविलास के मतानुसार श्रीईश्वर पुरी हैं) "श्रीमाधवेन्द्र पुरी पाद जी, श्रीमध्वाचार्य सम्प्रदाय के एक प्रसिद्ध संन्यासी थे। इन्हीं के अनुशिष्य श्रीचैतन्य देव जी हैं। श्रीमध्व सम्प्रदाय में इनसे पूर्व प्रेम-भक्ति के कोई लक्षण नहीं थे। इनके द्वारा कृत **'अयि दीनदयार्द्रनाथ'** श्लोक में महाप्रभु जी का शिक्षित तत्त्व बीज रूप में था।"

-श्रील भक्ति विनोद ठाकुर

"ये ही श्रीमध्व गौड़ीय सम्प्रदाय द्वारा सेवित भक्ति कल्पतरु के प्रथम अंकुर हैं। इनसे पूर्व श्रीमध्व सम्प्रदाय में श्रृंगार रसात्मिका भक्ति का कोई भी लक्षण नहीं देखा जाता था।"

- श्रीभक्ति सिध्दान्त सरस्वती गोस्वामी प्रभुपाद

तीर्थ भ्रमण के समय पश्चिम भारत में श्रीमाधवेन्द्र पुरी पाद जी के साथ श्रीमन् नित्यानन्द प्रभु का मिलन हुआ था। मिलन होने के साथ-साथ ही दोनों प्रेम में मूर्छित हो

गए थे। श्रीचैतन्य भागवत के नवम् अध्याय में वर्णित है—

"एइमत नित्यानन्द प्रभुर भ्रमण।
दैवे माधवेन्द्र सह हैल दरशन॥

माधवेन्द्रपुरी प्रेममय-कलेवर।
प्रेममय यत सब सङ्गे अनुचर॥

कृष्णरस बिनु आर नाहिक आहार।
माधवेन्द्रपुरी देहे कृष्णेर विहार।

याँर शिष्य प्रभु आचार्यवर गोसाञि।
कि कहिव आर ताँर प्रेमेर बड़ाइ॥

माधव पुरीरे देखिलेन नित्यानन्द।
ततक्षणे प्रेमे मूर्च्छा हइला निष्पन्द।

नित्यानन्दे देखि' मात्र श्रीमाधवपुरी।
पड़िला मूर्च्छित हइ' आपना पासरि'॥

भक्तिरसे माधवेन्द्र आदि सूत्रधार।
गौरचन्द्र इहा कहियाछेन बारेबार॥

(चै.भा.आ. 9/154-160)

[अर्थात् इस प्रकार भ्रमण करते-करते श्रीनित्यानन्द को दैवयोग से श्रीमाधवेन्द्र पुरी जी के दर्शन हुये। माधवेन्द्र पुरी जी का प्रेममय कलेवर था और उनके संगी-साथी भी प्रेम में मत्त थे। कृष्ण रसास्वादन को छोड़कर उनका और कुछ भी आहार नहीं था। ऐसा अनुभव होता था कि जैसे माधवेन्द्र पुरी जी का दिव्य

कलेवर कृष्ण की विहार स्थली हो। और बात तो छोड़ो जिनके शिष्य स्वयं अद्वैतआचार्य प्रभु जी हों, उनके प्रेम की बड़ाई इससे अधिक क्या हो सकती है।

जैसे ही नित्यानन्द जी ने माधवेन्द्र पुरी जी को देखा, उसी क्षण वे प्रेम में मूर्छित हो गये। उधर जब माधवेन्द्र जी ने नित्यानन्द जी को देखा तो वह भी अपने आप को भूलकर उसी क्षण मूच्छित होकर भूमि पर गिर पड़े। **श्रीमाधवेन्द्र पुरी भक्तिरस के आदि सूत्रधार हैं-ऐसा श्रीगौरचन्द्र जी ने बार-बार कहा है।]**

श्रीमन् नित्यानन्द प्रभु जी कहने लगे वैसे तो मैंने अनेकों तीर्थों का दर्शन किया है परन्तु आज माधवेन्द्र पुरीपाद जी का दर्शन करके मैं कृतार्थ हो गया हूँ। आज ही मुझे तीर्थ दर्शन का सम्पूर्ण फल प्राप्त हुआ है। इस प्रकार का प्रेम विकार मैंने कभी नहीं देखा, ये तो बादलों को देख कर ही अचेतन हो जाते हैं। श्रील माधवेन्द्र पुरी जी ने नित्यानन्द प्रभु को गोद में लेकर प्रेमाश्रुओं से भिगो दिया तथा नित्यानन्द जी की महिमा वर्णन में प्रमत्त हो उठे—

माधवेन्द्र पुरी नित्यानन्दे करि' कोले।
उत्तर ना स्फुरे कण्ठरुद्ध प्रेमजले॥

हेन प्रीत हइलेन माधवेन्द्र पुरी।
वक्ष हइते नित्यानन्दे बाहिर ना करि॥"

"जानिलुँ कृष्णेर कृपा आछे मोर प्रति।
नित्यानन्द हेन बन्धु पाइनु संहति॥

नित्यानन्दे याहार तिलेक द्वेष रहे।
भक्त हइलेओ से कृष्णेर प्रिय नहे॥"

(चै.भा.आ. 9/268-269,283,286)

[अर्थात् माधवेन्द्र पुरी जी ने नित्यानन्द को अपनी छाती से लगा लिया। छाती से लगाकर वे उन्हें कुछ कहना चाहते थे परन्तु प्रेम के कारण गला रुँध गया था। माधवेन्द्र पुरी जी

के हृदय में इतना प्रेम उमड़ आया कि वे नित्यानन्द जी को अपनी छाती से अलग न कर सके और कहने लगे कि मैं समझ गया हूँ कि श्रीकृष्ण की मेरे प्रति कृपा है, इसीलिये तो उन्होंने नित्यानन्द जैसे परम बन्धु से मुझे मिला दिया। नित्यानन्द जी के प्रति यदि किसी के हृदय में तिल मात्र भी द्वेष रहेगा, वह भक्त होने पर भी कृष्ण को प्यारा नहीं हो सकता।।]

श्रील माधवेन्द्र पुरी पाद जी की महिमा एवं नित्यानन्द प्रभु जी, माधवेन्द्र पुरीपाद जी के प्रति जो गुरुबुद्धि करते थे, वह स्पष्ट रूप से

श्रीभक्ति रत्नाकर ग्रन्थ में वर्णित हुई है—

माधवेन्द्र पुरी प्रेमभक्ति रसमय।
याँर नामस्मरणे सकल सिद्धि हय॥

श्रीईश्वरपुरी व रंगपुरी आदि यत।
माधवेर शिष्य सबे भक्तिरसे मत्त॥

गौड़ उत्कलादि देशे माधवेर गण।
सबे कृष्णभक्त, प्रेमभक्ति परायण॥

(भक्ति रत्नाकर 5/2272-74)

[अर्थात् माधवेन्द्र पुरी प्रेमभक्ति के रसस्वरूप हैं जिनके नाम स्मरण करने मात्र से ही सब सिद्धियाँ प्राप्त हो जाती हैं। श्रीईश्वर पुरी व रंगपुरी आदि जो माधवेन्द्र पुरी के शिष्य हैं,

सभी भक्तिरस में मत्त हैं। गौड़देश तथा उत्कल आदि देशों में जितने भी माधवेन्द्र जी के गण हैं सभी कृष्ण भक्त हैं और प्रेम भक्ति परायण हैं।]

"कथोदिन परे माधवेन्द्र सहिते।
देखा हैल प्रतीची तीर्थेर समीपेते॥

ये प्रेम प्रकाश हइल दोहार मिलने।
ताहा के वर्णिवे? ये देखिल सेइ जाने॥

नित्यानन्दे बन्धु ज्ञान करे माधवेन्द्र।
माधवेन्द्र गुरुबुद्धि करे नित्यानन्द॥

जानिलुँ कृष्णेर प्रेम आछे मोर प्रति।
नित्यानन्द हेन बन्धो पाइलुं सम्प्रति॥

माधवेन्द्र प्रति नित्यानन्द महाशय।
गुरुबुद्धि व्यतिरिक्त आर ना करय॥"

(भक्ति रत्नाकर 5/2330 -34)

[अर्थात् फिर कितने दिनों के पश्चात् प्रतीची तीर्थ के समीप माधवेन्द्र पुरी और नित्यानन्द जी परस्पर मिले, दोनों के मिलने पर जिस प्रेम का प्रकाश हुआ उसे कौन वर्णन कर सकेगा? इसे तो वही जानता है जिसने वह दृश्य देखा है। माधवेन्द्र जी नित्यानन्द जी को अपना बन्धु समझते थे और नित्यानन्द जी माधवेन्द्र जी के प्रति गुरु बुद्धि रखते थे।]

काटोया में संन्यास ग्रहण करने के बाद श्रीमन् महाप्रभु जी शान्तिपुर में श्रीअद्वैताचार्य के घर पर आए थे। वहाँ से श्रीपुरुषोत्तम धाम की यात्रा के समय जब वे छत्रभोग के रास्ते से गंगा के किनारे- किनारे आटिसार, पानिहाटी, वराहनगर होते हुये उड़ीसा के वृद्धमन्त्रेश्वर की सीमा पर पहुँचे, उस समय उनके साथ श्रीनित्यानन्द प्रभु, श्रीमुकुन्द, श्रीजगदानन्द और श्रीदामोदर थे। उसके बाद श्रीमन् महाप्रभु जी जब बालेश्वर- रेमुणा में पधारे तो वहाँ क्षीरचोर-गोपीनाथ जी के दर्शन करके प्रेमानन्द में डूब गए तथा उन्होंने

श्रीईश्वर पुरीपाद जी से श्रील माधवेन्द्र पुरीपाद जी के सम्बन्ध में जो सुना था व श्रीगोपीनाथ जी का नाम क्षीरचोरा श्रीगोपीनाथ क्यों हुआ, उसे भक्तों के सामने वर्णन करने लगे—

श्रीमन्महाप्रभु जी कहने लगे- कृष्ण प्रेम में उन्मत्त व विभावित चित्त वाले श्रील माधवेन्द्र पुरी पाद एक दिन श्रीगिरिराज गोवर्धन जी की परिक्रमा करके व श्रीगोविन्द कुण्ड में स्नान करके कुण्ड के नज़दीक ही एक वृक्ष के नीचे बैठ कर सन्ध्या कर रहे थे कि तभी एक बालक दूध का बर्तन लेकर आया व मुस्कराते हुए

श्रील माधवेन्द्र पुरीपाद जी को कहने लगा—"तुम क्या चिन्ता कर रहे हो, माँग कर क्यों नहीं खाते, मैं ये दूध लाया हूँ, पी लो।"

बालक का अद्भुत सौन्दर्य दर्शन कर माधवेन्द्र पुरीपाद चमत्कृत हो उठे, बालक के मधुर वाक्यों से वे अपनी भूख-प्यास सब भूल गए तथा बालक को पूछने लगे—

तुम कौन हो?
कहाँ रहते हो?
मैं भूखा हूँ, ये तुम्हें कैसे पता लगा?"

इसके उत्तर में गोपबालक ने कहा— मैं गोप हूँ, इसी गाँव में ही

रहता हूँ, मेरे गाँव में कोई भूखा नहीं रहता, कोई माँग कर खा लेता है, जो माँग कर नहीं खाता उसे 'मैं' देता हूँ। गाँव की कुछ स्त्रियाँ यहाँ पानी लेने के लिए आयी थीं, उन्होंने तुमको अनाहारी देख कर, ये दूध देकर मुझे भेजा है। मेरा गो-दोहन का समय हो गया है, इसलिए मुझे जल्दी ही जाना होगा। मैं बाद में आकर दूध का बर्तन ले जाऊँगा। इतना कह कर गोप बालक चला गया। उसे अन्तर्ध्यान हुये देख माधवेन्द्र पुरीपाद विस्मित हो गए·········दूध पीकर, दूध के बर्तन को धोकर रख दिया माधवेन्द्र पुरीपाद जी ने और इन्तज़ार करने

लगे उस गोप बालक का, कि कब वह आएगा। .... वृक्ष के नीचे बैठ कर हरिनाम कर रहे थे, रात्रि शेष हुई, तभी ज़रा सी तन्द्रा आयी माधवेन्द्र पुरीपाद जी को, और वे बाह्य- ज्ञान-शून्य हो गए। ठीक इसी समय पर उन्होंने एक स्वप्न देखा कि वही बालक आकर उपस्थित हुआ और माधवेन्द्र पुरीपाद जी का हाथ पकड़ कर उन्हें एक कुंज के अन्दर ले गया और कहने लगा—"इस कुंज में मैं रहता हूँ, शीत, ग्रीष्म व वर्षा में मैं महादुःख पा रहा हूँ। गाँव के लोगों को लाकर मेरा यहाँ से उद्धार करो, पर्वत के ऊपर एक मठ स्थापन करके मुझे

वहाँ स्थापित करो तथा बहुत मात्रा में शीतल जल लेकर मेरे अंगों का मार्जन करवाओ। मैं बहुत दिनों से आपका इन्तज़ार कर रहा था कि कब तुम आओगे और मेरी सेवा करोगे।

बहुदिन तोमार पथ करि निरीक्षण।
कबे आसी' माधव आमा करिबे सेवन॥

(चै. च. म. 4/39)

मैं तुम्हारी प्रेम सेवा को अंगीकार करूँगा एवं दर्शन देकर सारे संसार का उद्धार करूंगा। मेरा नाम है **'गोवर्धनधारी गोपाल'**, श्रीकृष्ण के

प्रपोत्र व अनिरुद्ध के पुत्र वज्र ने मुझे स्थापित किया था। मेरे सेवक, म्लेच्छों के भय से मुझे इस कुंज में रख कर भाग गए थे, तभी से मैं यहाँ हूँ। आप आए हैं, बहुत अच्छा हुआ, आप मेरा उद्धार करो।" श्रीमाधवेन्द्र पुरीपाद जी का स्वप्न भंग हुआ— **'श्रीकृष्ण गोप-बालक के रूप में आए थे, हाय ! मैं उन्हें पहचान न सका'**—ऐसा कह कर प्रेमाविष्ट होकर रोने लगे माधवेन्द्र पुरीपाद जी। थोड़ी देर बाद श्रीगोपाल जी की आज्ञा पालन करने के लिए उन्होंने मन को स्थिर किया और प्रातः स्नान करने के पश्चात् माधवेन्द्र पुरीपाद जी ने

गाँव के सब लोगों को इकट्ठा किया और कहा—**"देखो, आपके गाँव के ठाकुर गोवर्धनधारी गोपाल यहाँ कुंज के बीच में हैं, आप लोग कुल्हाड़ी व फरसा इत्यादि लेकर आओ, कुंज काट कर उन्हें बाहर निकालना होगा।"**........गाँव के लोगों ने परमोल्लास के साथ कुंज को काटा तो देखा घास-मिट्टी से ढका महाभारी ठाकुर!... महा-महा बलिष्ठ लोगों ने ठाकुर को उठाया और पर्वत के ऊपर ले जाकर उन्हें पत्थर के सिंहासन के ऊपर स्थापन किया। श्रीमूर्ति के अभिषेक के लिए गाँव के ब्राह्मण गोविन्द कुण्ड के जल

को छान कर उसे नए-नए सौ घड़ों में भर कर उपस्थित हुए। श्रीमूर्ति प्रकट हुई है तथा उनकी महाभिषेक पूजा होगी—ये सुन कर चारों ओर से आनन्द-कोलाहल उमड़ पड़ा। विचित्र-विचित्र प्रकार के वाद्यादि बजने लगे, नृत्य-गीत होने लगे। गाँव में जितना भी दही, दूध, घी इत्यादि था, सब लाया गया। मिठाई आदि भोग सामग्री एवं नाना प्रकार के उपहारों व पूजा के उपकरणों से सारा पर्वत भर गया। स्वयं श्रील माधवेन्द्र पुरीपाद जी ने महाभिषेक का कार्य सम्पन्न किया।पहले उन्होंने सम्मार्जन विधि के द्वारा अमंगला दूर

किया1 तथा बाद में काफी सारे तेल के द्वारा श्रीअंगों को चिकना करके पंचगव्य2 व पंचामृत3 के द्वारा स्नान कराया।

ततः शंख भूतेनैव क्षीरेण स्न्नापयेत्
क्रमात्।
दधा घृतेन मधुना खण्डेन च पृथक्-
पृथक्॥

(ह. भ. वि. पष्ठ विभाग)

इसके बाद सौ घोड़ों के द्वारा महास्नान4 कराया गया। महास्नान के बाद तेल के द्वारा श्रीअंगों को चिकना करके पुनः शंख-गन्धोदक5 से स्नान करवाया गया।

महास्न्नान के बाद श्रीअंग मार्जन करते हुए श्रील माधवेन्द्र पुरीपाद जी ने उन्हें वस्त्र पहनाए एवं उनके श्रीअंगों में चन्दन, तुलसी व पुष्पमाला अर्पित की। इसके बाद द्वापर युग में श्रीकृष्ण जी के परामर्शानुसार गोपों ने जिस प्रकार गिरिराज गोवर्धन जी का अन्नकूट उत्सव किया था, उसी प्रकार श्रील माधवेन्द्र पुरीपाद जी ने कलियुग में गोवर्धनधारी गोपाल जी का अन्नकूट उत्सव किया।

उत्सव में 10 ब्राह्मण अन्न बनाने में लगे, पाँच ब्राह्मणों ने व्यंजन तथा 5-7 ब्राह्मणों ने ढेर सारी रोटियाँ

बनाई। सभी का परिमाण इतना अधिक था कि सभी सामग्रियों को जब भोग के लिए सजाया गया तो वे पर्वताकार रूप में सुशोभित होने लगी। इसके इलावा दूध, दही, मट्ठा, शिखरिणी6 खीर, मक्खन तथा मलाई इत्यादि को बहुत से मिट्टी के बर्तनों में सजा कर रखा गया।

इस प्रकार जब अन्नकूट सजा दिया गया तो श्रील माधवेन्द्र पुरी जी ने तमाम भोग सामग्रियाँ गोपाल जी को निवेदन की। तमाम भोग सामग्रियों के साथ उन्होंने पानी से भरे घड़े भी समर्पण किये। बहुत दिनों से भूखे थे गोपाल जी, अत: उन्होंने

सारा का सारा ग्रहण कर लिया, परन्तु गोपाल जी के स्पर्श से वह फिर परिपूर्ण हो गया-इसे केवल माधवेन्द्र पुरीपाद जी ने ही अनुभव किया।

"बहु दिनेर क्षुधाय गोपाल खाइल सकल।
यद्यपि गोपाल सब अन्य-व्यञ्जन खाइल।
ताँर हस्त स्पर्शे पुनः तेमनि हइल॥"

(चै. च. म. 4/76-77)

[अर्थात बहुत दिनों के भूखे गोपाल जी ने सारा खा लिया। हाँ, यद्यपि गोपाल जी ने सभी अन्न-

व्यंजन खा लिये परन्तु फिर उनके श्रीहस्तों के स्पर्श से वे पुनः पूर्ववत् हो गये।]

इसके बाद गोपाल जी को आचमन देकर उन्हें ताम्बूल प्रदान किया गया। उनकी आरती की गयी एवं नयी चारपाई मंगाकर उनके शयन की व्यवस्था की गयी। माधवेन्द्र पुरीपाद जी ने अन्नकूट महोत्सव में पहले ब्राह्मण –ब्राह्मणियों को और उसके बाद आबाल-वृद्ध वनिता सभी ग्रामवासियों को प्रसाद दिया। गोपाल जी प्रकट हुए हैं-जब इस घटना का चारों ओर प्रचार होने लगा तो एक-एक दिन एक-एक गाँव

के लोग वहाँ आकर उत्सव करने लगे।

व्रजवासी लोकेर कृष्णे सहज-प्रीति।
गोपालेर सहज-प्रीति ब्रजवासी प्रति॥

(चै.च.म.4/95)

[अर्थात व्रजवासियों की सहज प्रीति है कृष्ण के प्रति तथा गोपाल जी की भी सहज प्रीति है ब्रजवासियों के प्रति।]

धीरे-धीरे बड़े-बड़े धनी क्षत्रिय लोगों ने गोपाल जी के लिए एक मन्दिर बनवा दिया तथा गोपाल जी की दस हज़ार गायें हो गयीं।........ दो वर्ष तक इसी प्रकार गोपाल जी की

सेवा चलती रही। इसके बाद एक दिन श्रील माधवेन्द्र पुरीपाद जी स्वप्न में देखते हैं कि गोपाल जी उन्हें कह रहे हैं कि उनके अंगों की गर्मी अभी भी नहीं गयी, मलयज चन्दन के अंग पर लेपन द्वारा ये गर्मी दूर हो जाएगी। प्रभु की आज्ञा पाकर श्रील माधवेन्द्र पुरीपाद जी प्रेमाविष्ट हो गए तथा गोपाल जी की सेवा में उपयुक्त सेवक नियुक्त करके मलयज 7 चन्दन लेने के लिए पूर्व देश की ओर चल दिये। इसी समय वे श्रीअद्वैत आचार्य जी के घर शान्तिपुर (गौड़देश) में आये थे तथा यहाँ उन्हें दीक्षा देकर रेमुणा पहुँचे।

रेमुणा में गोपीनाथ जी का अपूर्व रूप दर्शन करके वे प्रेम-विह्वल हो उठे। काफी समय तक उन्होंने वहाँ नृत्य-कीर्तन किया। गोपीनाथ जी के भोग की परिपाटी को देख कर वे बड़े सन्तुष्ट हुए। यहाँ पर क्या-क्या भोग लगता है?—जब उन्होंने एक ब्राह्मण से इस प्रकार का प्रश्न किया तो उत्तर में ब्राह्मण ने कहा—

“सन्ध्याय भोग लगे क्षीर—
‘अमृतकेलि’ नाम।

द्वादश मृत्पात्रे भरि, ‘अमृत समान’।।

‘गोपीनाथेर क्षीर बलि प्रसिद्ध नाम
यार।।

पृथ्वीते एच्छे भोग कोँहा नाहि आर॥

(चै.च.म. 4/117-118)

[अर्थात संन्ध्या के समय क्षीर (खीर) का भोग लगता। खीर का नाम है 'अमृतकेलि'। मिट्टी के 12 बर्तनों में भरकर इस अमृत समान खीर का भोग लगता है। यह खीर गोपीनाथ जी की खीर के नाम से प्रसिद्ध है, ऐसा भोग पृथ्वी पर और कहीं नहीं मिलता है।]

ठीक उसी समय 'अमृतकेलि' खीर का भोग ठाकुर जी को निवेदन किया गया। तब श्रील माधवेन्द्र पुरीपाद जी ने मन-मन में विचार

किया कि बिना माँगे ही यदि इस खीर का प्रसाद मिल जाता तो मैं उसका आस्वादन करता और ठीक उसी प्रकार की खीर का भोग अपने गोपाल जी को लगाता...... किन्तु साथ-साथ उन्होंने अपने आपको धिक्कार दिया कि मेरी खीर खाने की इच्छा हुई?

ठाकुर जी की आरती दर्शन करके और उन्हें प्रणाम करके वे मन्दिर से बाहर चले आए और जन शून्य हाट में बैठ कर हरिनाम करने लगे। माधवेन्द्र पुरीपाद जी अयाचक वृत्ति के थे। उन्हें भूख-प्यास का कोई बोध ही न था। वे हमेशा ही प्रेमामृत

पान करके तृप्त रहते थे। इधर पुजारी अपने कृत्य का समापन करके जब सो गया तो स्वप्न में ठाकुर जी उससे कहने लगे—

उठह पुजारी, कर द्वार विमोचन।
क्षीर एक राखियाछि संन्यासि कारण॥

धड़ार अंचले ढाका क्षीर एक हय।
तोमरा ना जानिला ताहा आमार मायाय।

माधव पुरी संन्यासी आछे हाटेते वसिञा।
ताहाके त, एइ क्षीर शीघ्र देह लैञा॥

(चै. च. म. 04/127-129)

[अर्थात् पुजारी उठो, मन्दिर के दरवाजे खोलो। मैंने एक संन्यासी के लिये एक पात्र खीर रखी हुई है जो कि मेरे आंचल के कपड़े से ढकी हुई है। मेरी माया के कारण तुम उसे नहीं जान पाये। माधवेन्द्र पुरी संन्यासी हाट में बैठा हुआ है। शीघ्र यह खीर ले जाकर उसको दे दो॥]

स्वप्न देख कर पुजारी आश्चर्यान्वित हो उठे। स्वप्न टूटने पर स्न्नान करने के पश्चात् मन्दिर के दरवाजे खोले तो देखा ठाकुर जी के आंचल के वस्त्र के नीचे एक खीर का पात्र रखा है। उस खीर के पात्र को लेकर पुजारी हाट में घूम-घूम कर

माधव पुरी जी को ढूँढते हुए इस प्रकार पुकारने लगा—

क्षीर लह एइ, यांर नाम 'माधव पुरी'।
तोमा लागि, गोपीनाथ क्षीर कैल चुरी॥

क्षीर लञा सुखे तुमि करह भक्षणे।
तोमा सम भाग्यवान् नाहि त्रिभुवने॥

(चै. च. म. 4/133-134)

[अर्थात जिसका नाम माधवपुरी है, वह यह क्षीर ले ले, आपके लिए ही गोपीनाथ जी ने यह क्षीर चोरी की है। यह क्षीर लेकर आप सुख से इसे खाओ। आपके समान भाग्यवान तो त्रिभुवन में भी कोई नहीं है।]

ऐसा सुन कर माधवेन्द्र पुरी जी ने अपना परिचय दिया, पुजारी ने उन्हें खीर दी तथा दण्डवत् प्रणाम किया। .... पुजारी जी ने अपने स्वप्न में हुए आदेश की बात माधवेन्द्र पुरीपाद जी को कही .... पुजारी की बात सुन कर माधवेन्द्र पुरी जी प्रेमाविष्ट हो गए। उन्होंने प्रेमोत्फुल्ल हृदय से उस खीर प्रसाद का सम्मान किया और खीर के बर्तन को धोकर व उसके टुकड़े-टुकड़े करके उसे अपने बहिर्वास8 में बाँध लिया। वे प्रतिदिन उस मिट्टी के टुकड़े को खाते और प्रेमाविष्ट हो उठते। बैठे-बैठे माधवेन्द्र

पुरीपाद जी ने सोचा कि प्रात:काल होने से ही लोगों की आपस में बातचीत होगी और यहाँ पर लोगों की भीड़ हो जाएगी। प्रतिष्ठा के भय से रात्रि समाप्त होते ही श्रील माधवेन्द्र पुरीपाद जी ने उसी स्थान से गोपीनाथ जी को दण्डवत् प्रणाम करके नीलाचल की ओर प्रस्थान किया।

नीलाचल में पहुँच कर जगन्नाथ जी के दर्शन करके प्रेम में विह्वल हो गये, श्रील माधवेन्द्र पुरी पाद। श्रील माधवेन्द्र पुरीपाद जी के पुरी में पहुँचने के पहले ही उनकी ख्याति

सर्वत्र फैल गयी और अगणित लोग आकर उन पर श्रद्धा भक्ति करने लगे।

प्रतिष्ठार स्वभाव एइ जगते विदित।
जे ना वाञ्छे, तार हय विधाता निर्मित।

प्रतिष्ठार भये पुरी रहे पलाइया।
कृष्ण प्रेमे प्रतिष्ठा चले सङ्गे गड़ाइया॥

(चै. च. म. 4/146-147)

श्रील माधवेन्द्र पुरीपाद जी प्रतिष्ठा के भय से वहाँ से भाग जाना चाहते थे, परन्तु चन्दन लेना होगा- इस सेवा के बन्धन के कारण वे वहीं रुक गये। उन्होंने श्रीजगन्नाथ जी के

सेवकों को तथा भक्त-महन्तों को गोपाल जी का सारा वृतान्त सुनाया और मलयज चन्दन इकट्ठा करके देने की प्रार्थना की। उनमें से जिनका राज-पुरुषों के साथ सम्बन्ध था, उनके माध्यम से उन्होंने मलयज चन्दन और कर्पूर इकट्ठा कर लिया। चन्दन को ढोकर ले जाने के लिये भक्तों ने एक ब्राह्मण तथा अन्य एक सेवक को भी माधवेन्द्र पुरीपाद जी के साथ में दे दिया। रास्ते में उनको कोई भी असुविधा न हो, उसके लिये घाटी के शुल्क को छुड़ाने के लिये राज सरकार का अनुमति पत्र भी दे दिया। पुरीपाद जी चन्दन लेकर

लौटने वाले मार्ग से दोबारा रेमुणा में आकर पहुँचे। श्रीगोपीनाथ जी के श्रीविग्रह के आगे बहुत समय तक नृत्य कीर्तन करते हुए प्रेमाविष्ट रहे एवं पुजारी द्वारा प्रदत्त खीर प्रसाद ग्रहण किया। उस रात उन्होंने वहीं मन्दिर में विश्राम किया। रात में दोबारा गोपाल जी का स्वप्नादेश हुआ –

गोपाल आसिया कहे-शुनह माधव।
कर्पूर-चन्दन आमि पाइलाम सब॥

कर्पूर सहित घषि, एसब चन्दन।
गोपीनाथेर अङ्गे सब करह लेपन॥

गोपीनाथ आमार से एकइ अङ्ग हय।
इँहाके चन्दन दिले, आमार ताप-
क्षय॥

द्विधा ना भाविह, ना करिह किछु मने।
विश्वास करि' चन्दन देह आमार
वचने॥

(चै. च. म. 4/158-161)

श्रील माधवेन्द्र पुरी पाद जी ने स्वप्नादेश पाकर गोपीनाथ जी के सभी सेवकों को बुलाया एवं गोपाल जी के स्वप्नादेश की बात बतायी। गर्मी के समय में गोपीनाथ जी चन्दन-लेप करवाएँगे, सुन कर गोपीनाथ जी के सेवकों को बहुत

आनन्द हुआ। श्रील माधवेन्द्र पुरीपाद जी ने अपने साथ आये दोनों व्यक्तियों को चन्दन घिसने के लिए लगाया एवं उनके अतिरिक्त और दो सेवकों को भी नियोजित किया।

जब तक चन्दन खत्म नहीं हुआ (गर्मी के समय में) तब तक गोपीनाथ जी के श्रीअंग में प्रतिदिन लेपन होता रहा। ग्रीष्मकाल की समाप्ति पर चातुर्मास्य आने से श्रील माधवेन्द्र पुरी पाद जी ने पुरी में जाकर व्रत का पालन किया।

श्रील माधवेन्द्र पुरीपाद जी का अलौकिक प्रेम-पराकाष्ठा रूप आदर्श यहाँ पर प्रदर्शित हुआ है।

श्रील प्रभुपाद जी ने इस प्रसंग में लिखा है –

"कृष्ण-विरह या चिद्-विप्रलम्भ ही जीव का एकमात्र साधन है। सांसारिक विरह से उत्पन्न वैराग्य संसार में ही आसक्ति कराता है; जबकि कृष्ण-विरह से उत्पन्न होने वाला वैराग्य कृष्णेन्द्रिय प्रीति-वान्छा का श्रेष्ठ निदर्शन है। यहाँ पर मूल महाजन श्रीपाद माधवेन्द्र पुरीपाद जी की अपूर्व कृष्णेन्द्रिय प्रीति-वान्छा, कृष्ण-सेवा की प्राप्ति के इच्छुक जीवों का एकमात्र आदर्श है व विशेष रूप से ग्रहणीय है।-इसी शिक्षा को श्रीमन्

महाप्रभु जी ने व उनके अन्तरंग भक्तों ने आचरण करके दिखाया।"

परम विरक्त व सर्वत्र उदासीन श्रील माधवेन्द्र पुरीपाद जी का गोपाल जी की सेवा के लिए इस प्रकार का आग्रह कि एक तो वे अनेक कष्ट पूर्ण सैकड़ों मील के रास्ते को पैदल चल कर आए और फिर मलयज चन्दन लेकर इतना लम्बा रास्ता फिर तय करके वापस जाने का आग्रह-इसे देख कर ही गोपाल जी को दया आ गयी।

"एइ तार गाढ़ प्रेमा लोके देखाइते।
गोपाल ताँरे आज्ञा दिल चन्दन आनिते॥

बहु परिश्रमे चन्दन रेमुणा आनिल।
आनन्द बाड़िल मने-दुःख ना गणिल॥

परीक्षा करिते गोपाल कैल आज्ञा दान।
परीक्षा करिया शेष हैल दयावान्॥"

(चै. च. म. 4/187-189)

श्रील माधवेन्द्र पुरी पाद जी ने मथुरा के सानोड़िया ब्राह्मण9 पर कृपा करके प्रेम-प्रदान की लीला की थी। वैष्णव जानकर उसके हाथ से भिक्षा ग्रहण की। इस के द्वारा वे दैववर्ण-आश्रम की मर्यादा संस्थापन कर गये।

श्रील माधवेन्द्र पुरी पाद जी के कृपा प्राप्त जान कर श्रीमन् महाप्रभु जी ने भी काशी से प्रयाग जाते समय मथुरा में पहुँच कर इसी सानोड़िया ब्राह्मण के यहाँ भिक्षा (भोजन) ग्रहण का आदर्श प्रदर्शन किया था। श्रीमन्महाप्रभु जी ने मथुरा के उस सानोड़िया ब्राह्मण के प्रति गुरुबुद्धि की व उसके अनुरूप मर्यादा का भी प्रदर्शन किया। महाप्रभु कहते हैं— "तुम गुरु हो, मैं तो शिष्य की तरह हूँ। ब्राह्मण जब महाप्रभु जी को प्रणाम करने लगे तो महाप्रभु जी ने उक्त ब्राह्मण से कहा गुरु होकर शिष्य को प्रणाम करना उचित नहीं लगता।"

श्रील माधवेन्द्र पुरीपाद जी के पावन जीवन चरित्र में एक और लीला वैशिष्ट्य हम देखते हैं, वह ये कि श्रीरामचन्द्र पुरी और श्रीईश्वर पुरी दोनों ही श्रील माधवेन्द्र पुरीपाद जी के दीक्षित शिष्य थे। किन्तु गुरु-अवज्ञा के फल से श्रीश्रीरामचन्द्र पुरी गुरु-कृपा से वन्चित रह गये जबकि एकान्तिक शुद्ध-भक्ति के द्वारा ईश्वर पुरीपाद जी कृष्ण –प्रेम की पराकाष्ठा को प्राप्त करके धन्य हो गये। रामचन्द्र पुरी अपने गुरुदेव जी की विप्रलम्भ रस की सर्वोत्तमता व चमत्कारिता को अपनी लौकिक बुद्धि से न समझ सके और उन्होंने माधवेन्द्र जी को

ब्रह्मज्ञान का उपदेश देने की धृष्टता की। माधवेन्द्र पुरीपाद जी ने गुस्से में उनकी उपेक्षा कर दी। इतने बड़े प्रेमी-भक्त होने पर भी श्रील माधवेन्द्र पुरीपाद जी ने गुरु-अपराधी के प्रति क्रोध प्रकाश किया तथा तीव्र भर्त्सना वाले शब्दों का प्रयोग किया—

शुनि' माधवेन्द्र मने क्रोध, उपजिल।
“दूर- दूर, पापिष्ठ” बलि' भर्त्सना करिल॥

”ष्ण कृपा ना पाइनु, ना पाइनु ‘मथुरा’।
आपन दुःखे मरों-एइ दिते आइल ज्वाला॥

मोरे मुख ना देखाबि तुइ, यायो यथी-तथि।
तोरे देखि' मैले, मोर हबे असदगति॥

'कृष्ण ना पाइनु'-मरों आपनार दुःखे।
मोरे 'ब्रह्म' उपदेशे एइ छार मूर्खे॥

एइ ये श्रीमाधवेन्द्रपाद उपेक्षा करिल।
सेइ अपराधे इँहार 'वासना' जन्मिल॥

शुष्क ब्रह्मज्ञानी, नाहि कृष्णेर 'सम्बन्ध'।
सर्वलोकेर निन्दा करे, निन्दाते निर्बन्ध॥

(चै. च. अ. 8/20-25)

श्रीरामचन्द्र पुरी ने अपने गुरु श्रील माधवेन्द्र पुरी पाद जी को कृष्ण

विरह कातर अवस्था में देखा, परन्तु चूँकि वे अप्राकृत विप्रलम्भ-स्फूर्ति को समझने में असमर्थ थे; अत: अपने लौकिक विचार से उन्होंने माधवेन्द्र पुरीपाद जी को मनुष्य समझा और प्राकृत अभाव में शोक-कातर समझकर उन्हें निर्विशेष ब्रह्म की अनुभूति कराने के लिए जुट गये। माधवेन्द्र पुरी शिष्य की मूर्खता व गुरु-अवज्ञा देखकर उसकी मंगलाकांक्षा से विरत हो गये तथा उन्होंने उसे त्याग दिया व भगा दिया।

—श्रील प्रभुपाद

वासना का तात्पर्य शुष्क ज्ञान-वासना है, जिससे मन में भक्तों की

निन्दा करने की वासना उदित होती है।

दूसरी ओर श्रीईश्वर पुरीपाद जी वाणी व शरीर के द्वारा एकान्तिक भाव से सेवा करके गुरु-कृपा को प्राप्त कर गये। उन्होंने गुरुदेव जी के पादपद्मों की सेवा, यहाँ तक कि अपने हाथों से उनका मल-मूत्रादि साफ किया एवं हर समय कृष्ण नाम व कृष्ण लीला श्रवण करवाकर अपने गुरुदेव को प्रसन्न किया—

"ईश्वरपुरी करेन श्रीपाद सेवन।
स्वहस्ते करेन मलमूत्रादि मार्जन॥

निरन्तर कृष्णनाम कराय स्मरण।
कृष्णनाम, कृष्णलीला शुनाय अनुक्षण॥

तुष्ट हञा पुरी ताँरे कैला आलिङ्गन।
वर दिया—'कृष्णे तोमार हउक प्रेमधन'॥

सेइ हैते ईश्वरपुरी— 'प्रेमेर सागर'।
रामचन्द्र पुरी हैल सर्वनिन्दाकर॥

महदनुग्रह-निग्रहेर 'साक्षी' दुइजने।
एइ दुइद्वारे शिखाइला जगजने॥

जगद्गुरु माधवेन्द्र करी' प्रेमदान।
एइ श्लोक पड़ि' तेंहों करिला अन्तर्ध्यान॥"

(चै. च. अ 8/26-31)

(अर्थात् ईश्वर पुरीपाद जी प्राणपन से अपने गुरु की सेवा कर रहे थे। यहाँ तक कि वे अपने हाथों से गुरु जी का मल-मूत्र तक साफ करते थे तथा माधवेन्द्र पुरी जी को कृष्ण नाम व कृष्ण लीला सुनाकर निरन्तर कृष्ण स्मरण करवाते थे जिससे संतुष्ट होकर उन्होंने श्रीईश्वर पुरीपाद जी का आलिंगन किया और उन्हें आशीर्वाद दिया कि कृष्ण ही तुम्हारे प्रेमधन हों। तभी से श्रीईश्वर पुरीपाद जी प्रेम के सागर बन गये जबकि रामचन्द्र पुरी सब की निन्दा करने वाले बन गये। ये दोनों अनुग्रह और निग्रह के उदाहरण हैं। इन दोनों के

माध्यम से ही माधवेन्द्र पुरीपाद जी ने सारे जगत को अनुग्रह और निग्रह की शिक्षा दी है। श्रील माधवेन्द्र पुरी जी जगद्गुरु थे, इस प्रकार श्रीईश्वर पुरी जी को प्रेमदान कर निम्नलिखित श्लोक का उच्चारण करते हुये अन्तर्ध्यान हो गये।)

अयि दीनदयार्द्रनाथ।
हे मथुरानाथ कदावलोक्यसे।।

हृदयं त्वदलोककातरं।
दयितं भ्राम्यति किं करोम्यहम्।।

(पद्यावली-334)

"ओहे दीनदयार्द्र नाथ! ओहे मथुरानाथ! मैं कब आपका दर्शन

करूँगा! आपके दर्शन के बिना मेरा कातर हृदय अस्थिर हो गया है ! हे दयित, मैं अब क्या करूँ?"

श्रीमन् महाप्रभु जी इस श्लोक को पढ़कर प्रमोन्मत्त हो गये थे तथा नित्यानन्द प्रभु जी ने उन्हें गोद में बिठा लिया था।

श्रील माधवेन्द्र पुरीपाद जी ने फाल्गुन मास की शुक्ल द्वादशी तिथि को तिरोधान लीला की थी।

- - - - - - - - - - - - - - - - -

1 अमंगला के दूरीकरण के लिए इसमें यवचूर्ण, गो-धूमचूर्ण, लोध्रुचूर्ण (श्वेत वर्ण के वृक्ष का चूर्ण) कुमकुम्

चूर्ण, कलाई व पिष्ट चूर्णादि व्यवहार होता है। उषीरादि द्वारा या गाय की पूंछ के बालों से बनाई कूंची के द्वारा भी अमंगला दूरीकरण की विधि है।

2 पंचगव्य-दूध, दही, घी, गोमूत्र व गोबर।

3 पंचामृत-दूध, दही, घी, मधु व चीनी।

4 महास्थान में घी व स्न्नान जल -- प्रत्येक का परिमाण दो हज़ार पल होता है। चार तोला का पल होने से महास्नान में ढाई मन जल लगता है।

5 शंख गन्धोदक -- शंख में रखा जल, पुष्प चन्दन की सुगन्ध वाला

जल परिमाणे--

"स्न्नाने पलशतं देयं अभ्यंगे पंचविंशतिः।
पलानां द्वे सहस्त्रे तु महास्नान प्रकीर्तितम्॥"

(ह. भ. वि. पष्ठ वि.)

6. शिखरिणी: दूध, दही, चीनी, कर्पूर तथा काली मिर्च-इन पाँच द्रव्यों का मिश्र।

7. मलयज-मलय देशोत्पन्न। इसे चन्दन गिरि कहते है। यह मलय देश या मालाबार देश के पश्चिम घाट,

गिरिपुंज के दक्षिण में अवस्तिथ है। नीलगिरि को कोई-कोई मलय पर्वत भी कहते हैं। वैसे मलयज शब्द चन्दन को भी इंगित करता है।

8. बहिर्वास-संन्यासियों द्वारा पहना जाने वाला वस्त्र।

9. हमारे देश के पश्चिम में रहने वाले वैश्य जाती के लोग कई एक भागों में विभक्त हैं—अग्रवाल, कानोयाड़ तथा सानोयाड़ इत्यादि। इनमें अग्रवाल ही अति शुद्ध हैं। कानोयाड़ और सानोयाड़ आदि श्रेणी अपने-अपने कार्य दोष से पतित हैं।

'सानोयाड़' शब्द से सुनार को समजा जाता है तथा उन लोगों के पुरोहित ब्राह्मणों को ही सानोड़िया ब्राह्मण कहते हैं। याजन दोष से पतित होने के कारण इन ब्राह्मणों के घर संन्यासी भोजन नहीं करते।—ठाकुर श्रील भक्तिविनोद।

* * * * * * *

श्रीलगुरुदेव